ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 122-124

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी विमर्श

डॉ0 वी गीता मालिनी

सहायक प्राध्यापक, एथिराज कॉलेज फॉर वुमन, चेन्नई (तमिलनाडु) भारत

Received-17.07.2022, Revised-23.07.2022, Accepted-28.07.2022 E-mail: geetamalini_v@ethirajcollege-edu-in

सारांश:– समकालीन का अर्थ है अपने समय के बोध को व्यक्त करने वाला। परिवर्तनशील सामाजिक यथार्थ को साहित्य के माध्यम से व्यक्त करने वाले रचनाकार समकालीन कहलाते है। समकालीन रचनाकार समसामयिक विषयों का उल्लेख करने के साथ–साथ उसमें बदलाव की अपेक्षा भी करते हैं। समकालीनता का एक छोर अतीत में रहता है और दूसरा छोर अनागत की ओर फैले हुए होते है। समकालीन रचनाकार यथार्थ की यथास्थिति को स्वीकार नहीं करता बल्कि आलोचनात्मक दृष्टि से उसकी गहरी जांच–पड़ताल करता है।

कुंजीभूत शब्द– समकालीन, परिवर्तनशील, सामाजिक यथार्थ, साहित्य माध्यम, रचनाकार समकालीन, कहलाते है।समकालीन

आधुनिक युग की सबसे प्रशस्त एवं लोकप्रिय विधा उपन्यास मानी जाती है। हिन्दी उपन्यास लेखन की परंपरा लगभग 125 साल पुरानी है। साहित्य समाज का दर्पण होता है यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस दर्पण में आदिवासी समाज का बहुत कम, धुंधला और विकृत रूप ही दिखाई देता है। भारतीय साहित्य में आदिवासियों को असुर, गंवार, असभ्य एवं जंगली दिखाकर हाशिये पर रखा गया है। भारतीय संस्कृति कोश के अनुसार– 'आर्य एवं द्रविड भारत के इन दो मानव–समाज को छोड़कर उनसे भी पूर्व भारत में रहने वाले अथवा दूसरे देश से आकार वन पर्वत इनके आश्रय में निवासिय जातिय समूह को वन्य जाति अथवा आदिवासी कहा जाता है। भारतीय संविधान में इन्हें ही अनुसूचित जनजाति (बीमकनसमक जतपइमे) कहा गया है। आदिवासी के पास अपनी भाषा है, अपनी सांस्कृतिक विरासत है, अपनी गौरवशाली परंपरा रही है। उनकी संस्कृति नगर संस्कृति से भिन्न होती है। उनके जन्म संस्कार, विधि–विधान, विवाह प्रथाएं, तीज–त्योहार, उत्सव–पर्व, तलाक, मृत्यु विधि, प्रस्थापित समाज से भिन्न होती है। आदिवासी न केवल भारत का मूल निवासी था अपितु वह इस धरती का मूल निवासी था। आदिवासियों के जीवन में मानवीय गरिमा के उदात्त तत्वों का दर्शन मिलता है। उनमें सहजता, सरलता, ममता, कुंठा एवं मुक्तता की धारा प्रवाहमान हैं। समकालीन आदिवासी उपन्यासों में साहित्यकारों ने अधिकतर हाशिये किए गए आदिवासियों की समस्याओं पर जोर दिया है। आदिवासी समाज की सबसे बड़ी समस्या है, गरीबी। उसके बाद सवाल उठता है उनकी सुरक्षा का जो उन्हें कभी प्राप्त ही नहीं हुआ। शिक्षा का अभाव, बेकारी, बेरोजगारी, सांप्रदायिकता, शोषक–शोषित का भेद, अंधविश्वास एवम रूढ़िवादिता आदि समस्याओं का उल्लेख हुआ है। इन्हीं विषयों को केंद्र में रखकर समकालीन उपन्यासकारों ने आदिवासी विमर्श किया है। कुछ लेखकों ने आदिवासी समाज के नृत्यों, गीतों, त्योहारों, रहन–सहन पर लेखनी चलाई तो कुछ ने उनकी पीड़ा, वेदना, व्यथा–कथा और संघर्षों को वाणी दी।

समकालीन आदिवासी जीवन केन्द्रित उपन्यासों में 'धूणी तपे तीर','जंगल जहां शुरू होता है','पाँव तले की दूब','जंगल के फूल','समर शेष है','काला पादरी','पठार पर कोहरा','जो इतिहास में नहीं है','गगन घटा घहरानी','अल्मा कबूतरी','डूब','पार', शैलूष','जहां बांस फूलते है','रूपतिल्ली','वनतरी','सराहना','जंगल के आसपास','जंगल के गीत','मीठा घाटी','सीता, मौसी','बाजात अनहद ढोल','काला पहाड़','रेत','भारत बनाम इंडिया','हस्तक्षेप','जाने कितनी आंखे','कगार की आग','देवी','सु–राज','ग्लोबल गाँव के देवता' आदि उल्लेखनीय है।

'काला पादरी' तेजिंदर द्वारा लिखित उपन्यास है जिसमें मध्यप्रदेश के सुरजे जिले में घटित होती घटनाओं और जंगलों का विवरणात्मक, संवेदनशील और सूक्ष्म वर्णन है। ये आदिवासी अपनी आजीविका के लिए बेघर है जिसका फाइदा वहाँ के ईसाई धर्म के पादरी उठाते है। वे उन्हें भोजन का लालच देकर धर्म परिवर्तन के लिए मजबूर करते है। इस घटना का मुख्य कारण है 'भूख' । इसे उजागर करते हुए लेखक लिखते है "आदिवासी पिछले कई दिनों से जहरीली जंगली बूटियों खा रहे है और जिले के भित्री इलाकों में तो कुछ लोग अपनी भूख मिटाने के लिए बिल्लियाँ और बंदरों का शिकार कर, उनका मांस तक खा रहे हैं।" 1इशू के नाम पर चर्च की सफाई और अन्य नीच कार्यों के लिए आदिवासियों को लगाया जाता है जिसके कारण उन्हें बहुत अपमान सहना पड़ता है। आदिवासी लोग अभावों में जीते है। इन्हें शिक्षा और संपाति एकत्र करने से वंचित किया जाता है ताकि वे हमेशा दबे रहे।

'जंगल के फूल' अवस्थी जी का दूसरा आंचलिक उपन्यास है जिसके बारें में डॉ भाऊसाहब परदेशी लिखते है,'बस्तर जिले के ग्राम्य जीवन का यथार्थ चित्रण इस उपन्यास की विशेषता है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने शहर से दूर रहने वाले भोले–भाले आदिवासियों और इन लोगों की संस्कृति, रीति–रिवाज और मान्यताओं को यथार्थ के बहुत समीप रखा है। इसमें

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

एक ओर आदिवासियों की संस्कृति, रीति–रिवाजों को चित्रित किया गया है तो दूसरी ओर अंगेजी शासन काल में आदिवासियों द्वारा किये गये विद्रोह को अंकित किया है। आदिवासी संस्कृति में प्रचलित 'घोटूल' पर तो अवस्थी जी ने इस उपन्यास में विस्तृत प्रकाश डाला है। लेकिन यह घोटूल सेक्स आदान–प्रदान का केंद्र नहीं है। आदिवासी न कभी सेक्स के लिए भूखे है और न ही वे किसी से भयभीत हैं। यह उपन्यास राष्ट्रीय भावना से भी ओत–प्रोत है।'अंग्रेजों द्वारा अत्याचार आदिवासियों के लिए खौफनाक दृश्य बन गया है। दिन–प्रतिदिन बढ़ते अंगर्जों के अत्याचार और तानाशाही आदिवासियों को चिंता में डाल देते है। अंग्रेज शासक आदिवासियों को आपस में झगड़ा करवाते है। भोले–भाले आदिवासी उनकी धूर्त कूटनीति से पराजित होकर भी खुद को नए संघर्ष के लिए समर्पित करते है।

राकेश वत्स का 'जंगल के आस–पास' उपन्यास में सोन नदी के किनारे फैले जंगल और पहाड़ियों में बसे दमकड़ी अंचल के पिछड़े और शोषित आदिवासियों का आधुनिक सभ्यता से अलग एवं अभिशत जीवन का चित्रण हुआ है। इस उपन्यास में कोई भी कथा प्रधान नहीं है न कोई पात्र। रायसाहब उस पहाड़ी इलाके के अकेले बेताज बादशाह है। खेती के साथ ही उनके शराब, फलों का रस, लकड़ी चिराई, माँस तथा खुंभी को डिब्बों में बंद कराना जैसे उद्योग भी हैं। किसी अधिकारी ने अपना कानून दिखलाया तो वह जंगली जानवरों का शिकार बनाया जाता है। यह इलाका पूँजीपतियों का महाजन, पुलिस और नेताओं से अत्यधिक आतंकित है। इन वर्गों ने आदिवासियों का खून चूस डाला जिससे उनमें जड़ता और दब्बू मानसिकता पैदा हो गई है। इसी कारण वे अपने पे हो रहे शोषण और अत्याचार के खिलाफ आवाज नहीं उठा सके। जब आदमखोर जंगली जानवरों की समस्या आयी तब सरकार आदमखोर के बंदोबस्त हेतु रॉबर्ट को नियुक्त करते है किन्तु वह शिकारी की तरह आदिवासियों की बहु–बेटियों की इज्जत लूटताराहत है। शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने वाले आदिवासियों को पुलिस की सहायता से नक्सलवादी घोषित करके उनकी हत्या कारवाई जाती है।

संजीव कृत 'जंगल जहां शुरू होता है' उपन्यास बिहार के चंपारण के आदिवासी थारु जनजाति पर आधारित है। यह इलाका मिनी चंबल के नाम से जाना जाता है। थारु जनजाति के लोगों पर चौतरफा शोषण होता है। एक तरफ जंगल में डाकुओं का तो दूसरी तरफ प्रशासन का। जंगल के डाकू और पुलिस दोनों इन्हें सताती है। उपन्यास का महत्वपूर्ण पात्र काली थोड़ा–बहुत पढ़ा–लिखा है। काली ठेकेदार सुलेमान खान के यहाँ काम करके मजदूरी के पैसे माँगता है पर ठेकेदार मुजदूरी देने से इनकार करता है वहीं एक दिन काली देखता है की डाकू परशुराम यादव ठेकेदार से पंद्रह हजार रुपये वसूलता है। काली सोचता है की ठेकेदार के पास मजदूरी देने के लिए पैसे नहीं पर डाकुओं के लिए मूँह मांगे दाम। यहीं से काली डाकू बन जाता है और अपना एक गिरोह भी बना लेता है। अपनी बदनामी का दाम चुकाने के लिए और आर्थिक रूप से मजबूत होने के लिए वे डकैती करते है,"हमारा तो हर तरीकों से मौत लिखी है। जमींदार से, डाकू से, देव–पिता से, भूत भवानी से, पुलिस लेखपाल से, इसी के चलते काली डाकू बनने को विवश होता है।" 2 इस प्रकार काली डाकू बनकर व्यवस्था तंत्र को चुनौती देता है। काली निरपराध आदिवासियों को मारने वाली पुलिस को पत्र लिकखकर प्रश्न पूछता है, उसकी लड़ाई एक प्रकार से सशस्त्र क्रांति का शंखनाद करता है।

'वनतरी' सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव का विशुद्ध आदिवासी जीवन केन्द्रित उपन्यास है जिसकी कठभूमि बिहार राज्य के होयहात प्रखण्ड की डुमरी अंचल है। बुद्ध परहिया के घर जन्मी वनतरी पढ़ी–लिखी होने के कारण उसमें अधिकार बोध एवं चेतना संक्रमित होती है। अपनी आदिवासी जाति के लिए अन्याय एवं शोषण का डटकर विरोध करती है। जमींदारी प्रथा, राजनीतिक भ्रष्टाचार, झूठे आश्वासन को पहचान कर इन सारी समस्याओं का हल खोजती है। वस्तुतः उपन्यासकर ने वनतरी के माध्यम से एक आदिवासी युवती के विद्रोह को व्यापक फलक पर चित्रित किया है।

शिवप्रसाद सिंह का 'शैलूष' उपन्यास आदिवासी नट जीवन का समग्र एवं जीवंत दस्तावेज है। लोक संस्कृति की पृष्ठभूमि पर आधारित इस कृति में नट आदिवासी जीवन के अंतरविरोध, आर्थिक विपन्नता, रुग्णता, शारीरिक संबंधो की जड़ता, नई चेतना, संघर्ष, शोषण आदि विभिन्न संदर्भों का प्रस्तुतीकरण हुआ है। पाँच सौ वर्ष पूर्व घटित नटों एवं आदिवासियों के पुरखों मानगुरु और नेथिया बनजारिन की कथा और उससे संबंधित अनेक लोकगीतों एवं लोक कथाओं को उपन्यास में पिरोया गया है। जमीन को बचाने हेतु नट सब्बों के नेतृत्व में जमींदार का जमकर विरोध करते हैं।

श्री प्रकाश मिश्र रचित 'जहां बांस फूलते है' उपन्यास में आदिवासी लुशेइयों की जीवन पद्धति, उनके रीति–रिवाजों, परम्पराओं, रुढियों, आदर्शों को रेखांकित किया है। आदिवासी लोग रोटी, कपड़े और मकान के लिए किसी भी तरह का काम कर लेते है चाहे वो खेती का काम हो, खदान का हो या चोरी का। खेती के काम के लिए उन्हें वर्षो इंतजार करना पड़ता है,"भूख का मारा मिजो वर्षों तक इंतजार करता है, फिर जंगल को साफ कर धान लगा जाता है। फसल जब तैयार होने को होती है तो अपना झोपड़ा बना जाता है। एक दिन इलाके के पुराने जमींदार..... अपने साथियों के साथ आ धमकते हैं। इनके

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

घरों को उजाड़, फसल काटकर ले जाते है और खेती लायक जमीन दो–चार साल के लिए कब्जा कर लेते है।3

भगवनदास मोरवाल द्वारा रचित 'काला पहाड़' देश में बढ़ती हुई सांप्रदायिकता पर आदिवासियों की गहरी संवेदनाओं को व्यक्त किया गया है। स्वार्थी राजनेता सत्ता और संपत्ति पाने के लिए किस सीमा तक गिर सकते है इसका बेबाक चित्रण है। यह कथा अंचल विशेष की होने पर भी अपनी मूल प्रकृति में पूरे देश का प्रतिनिधित्व करती है। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था का टूटना, मानवीय स्नेह सौहार्द का क्षय समूचे देश का कटु सत्य है।

'अल्मा कबूतरी' मैत्रेयी पुष्पा का सशक्त उपन्यास है। उपन्यास में प्रमुखतः दो समाजों को चित्रित किया गया है। पहले आदिवासी कबूतरा समाज और दूसरा सभ्य समाज जिसे कबूतरा जाति के लोग अपनी भाषा में 'कज्जा' कहते है। इसमे प्रमुख पात्र अल्मा कबूतरी आदिवासी रामसिंह की बेटी है, जो तमाम चुनौतियों का सामना करते हुए अपनी पढ़ाई करती है। भावी जीवन में अपने सपनों को साकार करती है। इस उपन्यास के बारें में प्रो. कुंटे लिखते है कि, "यह कथा ही नहीं आज का यथार्थ है, ग्रामीण भारत दलितों की हालत इन कबूतराओं से अलग नहीं है। सवर्ण समाज तथा उस वर्ग के शिक्षित को यह स्वीकार नहीं कि कबूतरा उनके ज्ञान के अस्त्र–शास्त्रो को प्राप्त करे। शिक्षा से विमुक्त जाति में जाति चेतना से उन्हे डर लगने लगता है। इसी कारण उन्हें शिक्षा से वंचित रखने का प्रयास किया गया है, समाज में निर्मित जाति चेतना का प्रयास किया गया है।"[4] ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति में भी कबूतरी अपने और अपने लोगों के अधिकार के लिए लड़ती है। अल्मा अत्यंत संघर्षशील स्त्री है जो अपने बल पर वेश्याओं के व्यापारी के हाथों निकाल भागती है और संघर्ष कर मंत्री पद प्राप्त करती है।

रणेन्द्रकृत 'ग्लोबल गाँव के देवता'उपन्यास में असुर जनजाति की संस्कृति और सत्ता के बल पर बने देवताओं द्वारा शोषित आदिवासी जनजीवन को प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास के आवरण पर छपी ये पंक्तियाँ सम्पूर्ण उपन्यास का निचोड़ है। "'ग्लोबल गाँव के देवता' वस्तुतः आदिवासियों–वनवासियों के जीवन का संतप्त सारांश है। शताब्दियों से संस्कृति और सभ्यता की पता नहीं किस छन्नी से छन कर अवशिष्ट के रूप में जीवित रहने वाले असुर समुदाय की गाथा पूरी प्रामाणिकता व संवेदनशीलता के साथ रणेन्द्र जी ने लिखी है। आग और धातु की खोज करनेवाली, धातु पिघलाकर उसे आकार देनेवाली कारीगर असुर जाति को सभ्यता, संस्कृति, मिथक और मनुष्यता सबने मारा है। 'ग्लोबल गाँव के देवता' असुर समुदाय के अनवरत जीवन संघर्ष का दस्तावेज है। देवराज इन्द्र से लेकर ग्लाबल गांव के व्यापारियों तक फैली शोषण की प्रक्रिया को रणेन्द्र उजागर कर सके हैं। हाशिए के मनुष्यों का सुख–दुख व्यक्त करता यह उपन्यास झारखंड की धरती से उपजी महत्वपूर्ण रचना है। असुरों की अपराजेय जिजीविषा और लोलुप–लुटेरी टोली की दुरभिसंधियों का ह्रदयग्राही चित्रण।"[5]

बीसवीं सदी में भारतीय आदिवासी समुदायों की अर्थ व्यवस्था में वस्तु विनिमय प्रणाली के नष्ट होने के बाद जब से मुद्रा विनिमय का चलन बढ़ा तब से आदिवासी जातियाँ महाजनी शिकंजे में फंसती गई। इसका नतीजा यह हुआ कि आदिवासियों को पैसों के लिए उच्च वर्गो के नीचे मजदूरी और गुलामी की जिंदगी जीनी पड़ी। कोयलांचल–शिल्यांचल का पूरा झारखंड क्षेत्र ऐसे हादसों से भरा पड़ा है। 'धार' या 'समर शेष है' इसी जमीन के उपन्यास है। इसकी अनुगूँज 'डूब' और 'पार' (वीरेंद्र जैन) तक सुमुखर सुनी जा सकती है। इसी तरह संजीव कृत 'पाँव तले की दूब' में आदिवासी समाज की नवीनतम आकांक्षाओं और संघर्षों को वैचारिक आंदोलनो के साथ ऊत्कर्षित किया गया है।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते है कि आदिवासी जीवन केन्द्रित उपन्यासों का प्रतिपाद्य न केवल आजादी के बाद के गांवों की ऊपरी सतह पर दिखाई देने वाली घिनौनी राजनीति, जातिवाद, ईर्ष्या–द्वेष, भ्रष्टाचार, लाल फीताशाही, अंधविश्वास, स्वार्थ एवं गांवों का टूटन तथा आपसी रिश्तों का खोखलापन ही है, बल्कि आजादी के बाद आदिवासियों में उत्पन्न एक नयी चेतना, एक नया आत्मविश्वास, अन्याय, अत्याचार और विरोधियों से लड़ने की नयी मानसिकता का भी चित्रण हो रहा है। समय के साथ उपन्यासकारों ने साहित्य में आदिवासी विमर्श को उचित अभिव्यक्ति का माध्यम प्रदान कर इस वर्ग में नई चेतना व क्रांति का संचार किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. 'काला पादरी', तेजिंदर सिंह, पृ०सं 21.
2. 'जंगल जहां से शुरू होता है', संजीव, पृ. सं 125.
3. 'जहां बांस फूलते है', श्री प्रकाश मिश्र, पृ. सं 74.
4. संपादक, सूर्यनरायन रणसुभे – उपलब्धि 2002 पृ. सं 88.
5. ग्लोबल गाँव के देवता, रणेन्द्र, पृः आवरण से।

*****